'परशुराम की प्रतीक्षा' कथावस्तु व प्रासंगिकता

नेफा के मैदान में जब भारतीय सेना पराजित हो गई, तब उस पराजय से सारा भारत बेहाल हो उठा और प्रत्येक व्यक्ति अपने आप से यह सवाल करने लगा कि आखिर विशाल देश इतनी आसानी से हार क्यों गया ? हमने हथियारों का बन्दोबस्त क्यों नहीं किया था ? हमारे राष्ट्रीय चरित्र में वह कौन-सा दोष है जो हमें सबल नहीं बनने देता ? हमने यह धोखा कैसे खाया ? क्या हमारी सरकार तैयार थी ? अथवा हम शान्तिवादी नारों के शिकार हुए है? अथवा दोष हमारे जातीय दर्शन का है? लेकिन हम किस तरह चलें कि ऐसा अपमान हमें फिर कभी झेलना नहीं पड़े ?

राष्ट्रकवि दिनकर की 'परशुराम की प्रतीक्षा' में ये सारे सवाल बारी-बारी से आते हैं और राष्ट्र के हृदय में घुमड़ने वाली बेचैनियों को कवि बारी-बारी से अभिव्यक्ति देता है और कविता के अन्तिम खण्ड में वह उस मार्ग का भी संकेत करता है जिस पर आरूढ़ हुए बिना भारत सम्मान के साथ नहीं जी सकेगा।

'परशुराम की प्रतीक्षा' कोई पाँच-छह सी पंक्तियों की कविता है और वह पाँच खण्डों में विभक्त है। इस कविता की शैली यह है कि नेफा के मैदान में हमारा हारा हुआ सिपाही खड़ा है और कवि उससे सवाल करता है तथा वह पराजित सैनिक कवि को उत्तर देता है। पहले खण्ड में **सिपाही से कवि का पहला ही सवाल इतना तीखा है कि वह हमारी तत्कालीन रक्षा व्यवस्था पर प्रश्न चिह्न बन जाता है।**

> गरदन पर किसका पाप वीर, ढोते हो ?
> शोणित से तुम किसका कलंक धोते हो ?

और इस प्रश्न के उत्तर में सिपाही जो कुछ कहता है उससे उस विचारधारा पर करारी चोट पड़ती है जिसे लेकर भारत उस समय चल रहा था। सिपाही कहता है-

> हाय, मैं उनका पाप धो रहा हूँ जिनके हृदय में असीम करुणा थी,
> जिनके भीतर न तो जवानी की आग थी, न कोई जहर था,

जो लोग सस्ती कीर्ति पाकर खुशी से फूल गए थे मौर जो ऐसे आदर्शों पर आसक्त थे जो निर्वीयं वीर निस्सार है। तथा

> गीता में जो त्रिपिटक निकाल पढ़ते हैं,
> तलवार गलाकर जो तकली गढ़ते हैं।
> शीतल करते हैं अनल प्रबुद्ध प्रजा का
> शेरों को सिखलाते है धर्म प्रजा का
> सारी वसुंधरा में गुरुपद पाने को,
> प्यासी धरती के लिए अमृत लाने को,

जो संत लोग सीधे पाताल चले थे,
(अच्छे है अब, पहले भी बहुत भले थे ।)
हम उसी धर्म की लाश यहाँ ढोते हैं,
शोणित से संतों का कलंक धोते हैं।

दूसरे खण्ड में इस सिपाही के अनुसार भारत की पराजय इसलिए हुई कि व्यवहार को भूलकर वह प्रादर्श और कल्पना में खो गया था। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि जातियों के सामने जब भी बहुत बड़े आदर्श ध्येय के रूप में रखे जाते हैं जातियाँ विनष्ट हो जाती है। राष्ट्रकवि दिनकर का कहना है कि जो जाति अपने आपद्धर्म का पालन नहीं कर सकती, उसका परम धर्म से श्राप विनष्ट हो जाता है। उच्चतर मनुष्यता सचमुच ही श्लाघ्य और काम्य है किन्तु यह आदर्श पर्वत की चोटी पर अवस्थित है। लेकिन इस चोटी की ओर जो राह जाती है, वह हिसंक जन्तुओं से भरी हुई है। अतएव उच्चतर मानवता तक पहुँचने के लिए यह आवश्यक है कि हमारी सामान्य मानवता सुदृढ़ और ठोस हो । परम धर्म की प्राप्ति हम आपद्धर्म के जरिये करते हैं। अर्थात् उच्चतर श्रृंग पर वही मनुष्य पहुँच सकता है जिसमें यह शक्ति हो कि वह रास्ते में मिलने वाले हिंसक जन्तुओं के पट्टों से अपने को बचा सके

है खड़े हिस्र वृक, व्याघ्र, खड़ा पशुबल है,
ऊँची मनुष्यता का पथ नहीं सरल है।
ये हिल साधु पर भी न तरस खाते हैं,
कंठी माला के सहित चबा जाते है।
जो वीर काटकर इन्हें पार जाएगा,
उत्तुंग श्रृंग तक वही पहुँच पाएगा।

नेफा की लड़ाई का सबसे कारुणिक पक्ष यह है कि बिना किसी तैयारी के हमारे नौजवान उस युद्ध में झोंक दिये गए थे। उस समय यह अफवाह देश में सर्वत्र सुनी जाती थी कि हमारे सिपाहियों के हाथ में जो बन्दूकें थीं वे महज मामूली किस्म की थी और उनके पास गोलियाँ काफी तादाद में नहीं थीं। घायल सिपाहियों का एक दल जब मैदान से लौटा तो इलाज के लिए उसे दानापुर (पटना) के अस्पताल में रखा गया। उन सिपाहियों का अभिनन्दन करने को जनता मिठाइयाँ और पुष्पाहार लेकर दौड़ी। लेकिन, सिपाहियों ने कहा, “ये फूल मिठाइयाँ क्यों लाए हो ! अगर हो सके तो हमें बन्दूकें और गोलियाँ लाकर दो जिससे हम दुश्मन के अहंकार को चकनाचूर कर सकें। "

इसी पृष्ठभूमि को याद रखते हुए **कवि ने सिपाहियों से दूसरा सवाल यह पूछा है कि हे वीर, तुम्हारी हत्या का दायित्व किस पर है ?** वह कौन है, जिसे हम तुम्हारे बघ के लिए जिम्मेदार मान सकते हैं ? सिपाही कहता है, हम दुश्मन से नहीं हारे हैं। पराजय हमारी अपने ही घर में हुई है।

जिस देश के शासक न्याय बुद्धि से काम नहीं लेते, भाई-भतीजों को आगे बढ़ाने के लिए गलत नीति अख्तियार करते हैं, जिस देश के राजनीतिज्ञ लोभ के मारे सत्य नहीं बोल सकते, जिस देश के सत्ताधारी चारों ओर ठगों का पक्ष लेते है तथा चाटुकारों को अपना मित्र समझते हैं, जिस देश में आत्मबल की मिथ्या प्रशंसा के लिए बाहुबल की उपेक्षा की जाती है, जिस देश के नेता केवल शान्ति की बातें बोलते हैं और जिसके कवि धरती को छोड़कर आकाश में उड़ान भरते हैं, वह देश लड़ाई में कभी भी विजयी नहीं हो सकता ।

घातक है जो देवता-सदृश दिखता है, लेकिन हमारे में गलत है। जिस पापी को गुण नहीं, गोत्र प्यारा है, समझो, उसने ही हमें यहां मारा है।चोरों के है जो हिंदू, ठगों के बल हैं, जिनके प्रताप से पलते पाप सकल है, जोल-प्रपंच सब को प्रश्रय देते हैं, या चाटुकार जन से सेवा लेते हैं,

यह पाप उन्हीं का हमको मार गया है, भारत अपने घर में ही हार गया है।

जिसके देश शासन में विलासिता, आलस्य और दुराचार हों, उस देश की सेना युद्ध में विजय नहीं पाती है। लड़ाई जीतने की जिम्मेवारी केवल फौजियों की नहीं होती। लड़ाई जीतने के लिए शासन को निष्कपट और शुद्ध होना पड़ता है तथा सभी लोगों को कठोर जीवन बिताना पड़ता है। जिस समय मोर्चों पर गए हुए जवान अपना रक्त बहा रहे हों, उस समय देश के भीतर प्रत्येक व्यक्ति को उस रुधिर का मूल्य अपने स्वेद से चुकाना चाहिए । **नेफा का सिपाही कहता है कि राजों, व्यापारियों और मजदूरों से कहो कि वे अपने पापों का बोझ हम पर नहीं डालें। जनता से कहो कि वह अपने संकल्प को अटल बनाये और शासकों से कहो कि वे न्यायशील हो।** अगर शासन में पवित्रता नहीं पाई तथा अयोग्य व्यक्ति योग्य व्यक्तियों को ढकेल कर आगे बढ़ते गये तो इस देश को युद्धों में विजय कभी भी नहीं मिलने वाली है।

हम देंगे तुमको विजय, हमें तुम बल दो दो शस्त्र और अपना संकल्प अटल दो ।
हों खड़े लोग कटिबद्ध वहाँ यदि घर में, हो कौन हमें जीते जो यहाँ समर में ?
हो जहाँ कहीं भी प्रनय, उसे रोको रे ! यदि करें पाप शशि-सूर्य उन्हें टोको रे !
तामस बढ़ता यदि गया ढकेल प्रभा को, निबंध पंथ यदि मिला नहीं प्रतिभा को,
रिपु नहीं, यही अन्याय हमें मारेंगा, अपने घर में ही फिर स्वदेश हारेगा

कविता का तीसरा खण्ड, कवित्व की दृष्टि से कदाचित् सर्वश्रेष्ठ है। इस खण्ड में भारत के उन सभी वीरों का आह्वान किया गया है जिन्होंने भारत के गौरव की रक्षा के लिए कभी तलवार उठाई थी। चाणक्य और चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य और राणा प्रताप, गुरु गोविन्दसिंह और शिवाजी महाराज, बन्दावीर और लक्ष्मीबाई तथा सुभाष चन्द्र बोस और भगतसिंह का आह्वान कवि ने ऐसी भावाकुलता से किया है कि उसे पढ़कर एक बार भुजाएँ फड़क उठती हैं। किन्तु इस खण्ड में इतनी ही बातें नहीं है। कवि कहता है, भारत कोई साधारण देश नहीं है। कसूर उसका यह है कि उसने शरीर

बल की उपेक्षा करके अपना सारा ध्यान आत्मा पर केन्द्रित कर दिया है। इसीलिए आज के असुर भारत पर उसी प्रकार हँसते हैं जैसे पुराने काल में दानव देवताओं पर हंसा करते थे। आवश्यकता इस बात की है कि हम आत्मा के साथ-साथ अपने शरीर का भी विकास करें। जिस दिन भारत के बाहुबल का सम्यक् विकास हो जाएगा, उस दिन कोई भी देश भारत का अपमान नहीं कर सकेगा। भारत का पाप उसकी नकली महिला और नकली वैराग्य है। भारत की अभी तुरन्त की आवश्यकता यह है कि वह बाहुबल से भली भांति सज्जित हो जाय।

जब हृदय हृदय पावक से भर जायेगा, भारत का पूरा पाप उतर जायेगा,

देखोगे, कितना प्रलय बंद होता है, सिवन्त हिन्द कितना प्रचंड होता है

बाहों से हम प्रबुधि प्रगाध चाहेंगे, धंस जायेगी यह बरा अगर चाहेंगे।

तूफान हमारे इंगित पर ठहरेंगे। हम जहाँ कहेंगे, मेघ वहीं घहरेंगे।

भारत इतिहास के एक खास दौर से गुजर रहा है। हम अभी कुछ-कुछ नाबालिग जैसे लोग हैं। इसीलिए हमने यह विश्वास कर लिया कि शांतिवादी देश से कोई भी देश लड़ाई ठानने की बात नहीं सोचेगा । किन्तु अनुभव हमें यह हुआ है कि जो देश कमजोर होता है, सभी देश उसी से लड़ना चाहते हैं। किन्तु, राष्ट्रकवि ने जो स्वप्न देखा है, वह शायद पूरा होने वाला है सचमुच ही, जिस रास्ते पर हम अब चलने लगे है, उस पर चलते-चलते एक दिन वह स्थिति पा आएगी जब बांहों से हम बुधि अगाध थाहेंगे, धंस जायेगी यह धरा, अगर चाहेंगे। तूफान हमारे इंगित पर ठहरेंगे, हम जहां कहेंगे, मेघ वहीं घहरेंगे ।

इस खण्ड में भारत की भौगोलिक एकता का जो चित्र उतरा है, वह भा प्रत्यन्त भव्य है । कवि ने समान भाव से देश के उत्तरी और दक्षिणी भागों वा आह्वान किया है तथा हिमालय से लेकर हिन्द महासागर तक अपनी पुकार उसने एक-सी व्याकुलता के साथ भेजी है।

गरजो हिमाद्रि के बिखर, तुरंग पाटों पर, गुलमर्ग, विध्य, पश्चिमी, पूर्व घाटों पर,

भारत-समुद्र की लहर, ज्वार-भाटों पर, गरजो, गरजो मीनार और लाटों पर ।

युद्ध में सफलता उसी जाति को मिलती है जिसके कवि, चिन्तक, योगी, महात्मा, राजे, योद्धा और व्यापारी, किसान तथा मजदूर सभी एक सक्ष्य की ओर उम्मुख हो जाते हैं। यदि सारा देश एक होकर रण में नहीं उठा तो विजय संदिग्ध हो जाएगी। इसलिए कवि कहता है-

चितकों, चितना की तलवार गढ़ो रे !

ऋषियो, कृशानु-उद्दीपक मंत्र पढ़ो रे !

योगियो, जो जीवन की ओर बढ़ो रे !

बन्दूकों पर अपना बालोक मढ़ो रे !

है जहाँ कहीं भी तेज, हमें पाना है।

रण में समग्र, भारत को ही ले जाना है।

राष्ट्र-रक्षा के इस महान अभियान में कवि किसी को भी अलग बैठने देने की तैयार नहीं है। वह चाहता है कि आज फिर से खड्ग ग्रहण करे और बुद्ध इस हिंसा का समर्थन करें क्योंकि प्रश्न आज आध्यात्मिक साधना का नहीं, पूरे भारत-राष्ट्र के जीवन और मृत्यु का है।

पर्वत पति को ग्रामूल डोलना होगा,
शंकर को ध्वंसक नयन बोलना होगा।
प्रति पर प्रशोक को मुंड तोलना होगा,
गौतम को जयजयकार बोलना होगा ।

कविता का चतुर्थ खण्ड वह है जिसमें सिपाही कहता है कि उसने नेफा के मैदान में जो कुर्बानी दी है, व्यर्थ नहीं जाएगी। हम एक ऐसी विचारधारा में फंस गये थे जो नकली और निस्सार थी। चीन ने गोले फेंक कर हमें जगा दिया है। हम प्रेम की राह से शान्ति शान्ति करते पा रहे थे, लेकिन चीनी आक्रमरण ने हमारे भीतर एक शंका उत्पन्न कर दी। अब, हमारी पराजय में से विजय का मार्ग निकलने वाला है नेफा के मैदान में तोपों के गर्जन के भीतर से असल में भारत के भविष्यत् ने गर्जना की है। भारत का मार्ग बदलने वाला है। वह प्रव बाहुबल की महामा पहचान गया है।

कुछ सोच रहा है समय राम में थम कर, है ठहर गया सहसा इतिहास सहम कर ।
सदियों में शिव का अचल ध्यान डोला है, तोपों के भीतर से भविष्य बोला है।
चोटें पड़ती यदि रहीं, शिला टूटेगी.   भारत में कोई नई धार फूटेगी ।

यह नई धारा कौन-सी है, इसका निरूपण कवि ने पशुराम के अवतरण के प्रसंग में किया है। चीनी समर को कवि इतिहास की बहुत बड़ी घटना मानता है। उसका विश्वास है कि पाप अंबर में जो अप्रतिम को छाया है, पाप जो हम को कोट निकल पाया है,यह किसी भांति भी वृथा नहीं जायेगा, आयेगा अपना महावीर धारेगा। यह महावीर प्रज्वलित-विभासित पुरुषत्व का प्रतीक होगा । वह विष्णु (रक्षण) और शंकर (संहार) का सम्मिलित अवतार होगा। वह पाप के साथ समझौता नहीं करेगा और राष्ट्रधर्म की रक्षा के निर्मित तलवार उठाने में उसे संकोच नहीं होगा। वह अपमान पीड़ित समाज के हृदय से प्रकट होगा और प्रत्येक व्यक्ति के समर्थन उसके तेज में वृद्धि होगी। जनता के मस्तिष्क में विद्युत के समान चमकनेवाला भाव से उसी महावीर का भाव है। वह जब आवेगा, उसके एक हाथ में कुठार और दूसरे में कुश होगा अर्थात् वह ब्रहम और क्षात्र, दोनों ही गुणों का समन्वित प्रतीक होगा।

कवियो, जयगान, कल्पना तानो,
पा रहा देवता जो उसको पहचानो
है एक हाथ में परशु एक में कुछ है,

श्रा रहा नये भारत का भाग्य-पुरुष है।

कई लोगों ने जहाँ-तहाँ कानाफूसी की है कि दिनकरजी ने जिस परशुराम का आवाहन किया है, वह शायद फौजी तानाशाह (मिलिटरी डिक्टेटर) है। किन्तु, कविता में इस आक्षेप के प्रमाण नहीं मिलते। त्रेता के परशुराम ने भी राज्य तो बहुत-से जीते थे, लेकिन राज उन्होंने कभी नहीं पहना था। राष्ट्रकवि की कल्पना का परशुराम भी शासन का भार संभालने को नहीं आयेगा। इस युग के राजाओं को आश्वस्त करते हुए नेफा का सिपाही कहता है कि,

मत डरो, संत वह मुकुट नहीं मांगेगा, धन के निमित्त वह धर्म नहीं त्यागेगा ।

तुम सोश्रोगे, तब भी वह ऋषि जागेगा, उन गया युद्ध तो बम-गोले दागेगा ।

परशुराम की कल्पना वीर ऋषि की कल्पना है। यह एक विचारधारा का प्रतीक है। और यह विचारधारा सर्वथा नवीन नहीं है। वह भारत के व्यक्ति व्यक्ति के हृदय में घुमड़ रही है ।

जातियों के अहंकार पर जब चोट पड़ती है, तब उसके भीतर अहंकार की अपेक्षा किसी अधिक बड़ी शक्ति का प्रादुर्भाव होता है। भारत के सहकार पर जो चोट पड़ी है, उससे भारत अकुला कर जागेगा और अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए वह सर्वस्व होम देगा | **अपमान के प्रक्षालन और स्वाभिमान की रक्षा के लिए भारत के हृदय 'से जो शक्ति प्रकट होने वाली है, उसी का नाम परशुराम है** ।

इस परशुराम से भय केवल उन्हें होगा जो अंहिसा की दुहाई देकर अपनी कायरता को छिपा रहे हैं, जो सूर्य के स्थान पर नकली सूर्य बन कर चमक रहे हैं और जनता को जो इन्द्रधनुष की सुन्दरता इशारों से दिखाते हैं, उस इन्द्रधनुष तक पहुँचने का रास्ता नहीं बना सकते। किन्तु, परशुराम लक्ष्य बिन्दु तक तुमको ले जायेगा, उंगलियाँ थाम मंजिल तक पहुँचायेगा ।

परशुराम. असल में, एक स्वप्न है, एक विचार है, भारतीय इतिहास का एक मोड़ है। वह गुरु भी हो सकता है, तानाशाह भी हो सकता है और भारत का प्रत्येक व्यक्ति भी हो सकता है।

कविता का पांचवां खण्ड वह है, जिसमें परशुराम के जीवन-दर्शन और उनकी शिक्षाओं का निरूपण किया गया है। संक्षेप में इस दर्शन का स्वरूप यह है कि पाँच तत्वों में से सब से प्रमुख तत्व वह्नि है। सत्य वही ग्राह्य है जो उद्दीपन सिखाता हो, सुख के वर्जन का विरोध करता हो। जो सत्य वैरागी का सत्य है, जिस सत्य में राख लिपटी हुई है, उस सत्य को मनुष्य को स्वीकार नहीं करना चाहिए। जो सत्य राख में सने, रूक्ष, रूठे है, छोड़ो उनको व सही नहीं, भ्रू है।

राधाकृष्णन ने कही कहा है कि यूरोप के लोग तो जीवन का उपभोग कर रहे है, किन्तु पूरब के लोग अभी अंधकार में जीवन का पर्व ही खोज रहे हैं। भारत ने भी ध्यान करते-करते इस लोक को गवा दिया। परशुराम भारत का आदर्श बदलना चाहते हैं। उनकी शिक्षा यह है कि आदर्श जीवन

योगियों का नहीं, विजयी का होता है, अतएव, भारतवासियों को वैराग्य छोड़कर बल का भरोसा करना चाहिए।

वैराग्य छोड़ बाँहों की विभा संभाली चट्टानों को छाती से दूध निकालो।

है रुकी जहाँ भी धार, शिलाएं तोड़ो,पीयूष चद्रमाओं का पकड़ निचोड़ो

चढ तुग शैल-शिखरों पर सोम पियो रे !योगियों नहीं, विजयी के सदृश्य जियो रे !

उपशम, वैराग्य, शान्ति, विनय करते-करते संसार में भारत का वही हाल हो गया, जो हाल ग्रामों में पुरोहितों का होता है। गाँव का पुरोहित सबसे निर्धन और सब से कमजोर होता है। गाँव के लोग पुरोहित को प्रणाम तो व करते हैं, किन्तु समाहत होने पर भी पुरोहित दुबंस ही रह जाता है।

परशुराम का कहना है कि आत्मा के प्रवास के लिए भी शरीर को बलवान होना चाहिए, धर्म के पालन के लिए भी मनुष्य को शरीर से शक्तिशाली होना चाहिए। जो दुर्बल और क्षीण है, उनके लोक और परलोक दोनों नष्ट हो जाते हैं।

पर, जब कुठार की धार क्षीण होती है,

स्वयमेव दर्भ की श्री मलीन होती है।

कुठार शौर्य और दभं धर्म के प्रतीक है। भारत का शौर्य जब से क्षीण होने लगा, तभी से उसका धर्म भी मलिन होता था रहा है।

शांति के विषय में परशुराम का विचार है कि वह केवल शांति-शांति चिल्लान से नहीं आयेगी। सोचना यह होगा कि जो लोग विश्व जनमत की उपेक्षा करके लड़ाइयाँ छेड़ने को तैयार हैं, उनके साथ हमें क्या बर्ताव करना चाहिए। परशुराम भारतवासियों को किसी भी भुलावे में रखना नहीं चाहते। उनकी सीधी सलाह है।

एक ही पन्थ, तुम भी प्राघात हनो रे !

मेषत्व छोड़ मेषो, तुम व्याघ्र बनो रे !

परशुराम की दृष्टि में शान्तिवाद बिलकुल निरापद आन्दोलन नहीं है। ये आन्दोलन किसी न किसी शस्त्र-सुसज्जित देश से उठते हैं और उनका लक्ष्य यह होता है कि संसार के देश हमारी हिंसा का समर्थन तथा दूसरों की हिंसा का विरोध करें। शांतिवादी आन्दोलन का कभी-कभी यह लक्ष्य भी होता है कि पड़ोस के देश शान्तिवाद के सपने में पढ़कर कमजोर हो जाएं जिससे बलशाली पड़ोसी उन्हें मजे से अपना ग्रास बना इसीलिए परशुराम कहते हैं-जब शान्तिवादियों मे किसने आशा से नहीं हाथ जोड़े थे ?

पर हाय, धर्म यह भी धोखा है छल है,

उजले कबूतरों में भी छिपा अनल है।

पंजों में इनके धार धरी होती है,

कइयों में तो बारूद भरी होती है।

परशुराम की शिक्षा व्यावहारिक धर्म की शिक्षा है। उस शिक्षा का मार यह है कि यज्ञ करते समय भी यज्ञशाला में बन्दूक तैयार रखनी चाहिए अन्यथा राक्षस यज्ञ को नष्ट करके यजमान और पुरोहित, दोनों को निगल जा सकते हैं। खास कर जो देश आकार में बड़े हैं, उन्हें कमजोर रहने का अधिकार नहीं है। अगर वे दुर्बल या कमजोर रहेंगे, तो उनकी दुर्बलता ही आक्रमण को निमंत्रण देगी और विश्वशांति में बाधा पहुँचायेगी।

वे देश शान्ति के सबसे शत्रु प्रबल है,
जो बहुत बड़े होने पर भी दुर्बल है ।
बड़े है जिनके उदर विशाल,बाह छोटी है,
भोथरे दांत पर, जीभ बहुत मोटी है

हिंसा-अहिंसा के द्वन्द्व में दिनकर जी ने बराबर व्यावहारिक धर्म का समर्थन किया है और यद्यपि प्रशंसा उन्होंने महात्मा गांधी की भी लिखी, किन्तु अपने मध्यम मार्ग पर वे सदैव एक समान अटल रहे हैं। अपना चुनाव उन्होंने अपने कवि जीवन के आरम्भ में ही कर लिया था। हिमालय की रचना उन्होंने सन् १६३३ ई० में की थी जिसमें आवश्यकता उन्होंने युधिष्ठिर नहीं, अर्जुन, भीम की बताई थी।

रे रोक युधिष्ठिर को न यहाँ जाने उनको स्वर्ग धीर !
पर फिरा हमें गाण्डीव गदा,लौटा दे अर्जुन भीम वीर ।

किन्तु चीनी आक्रमण के समय अर्जुन और भीम यथेष्ट नहीं रहे। उस समय देश की आत्मा अपना लक्ष्य परशुराम को बनाना चाहती थी, अतएव राष्ट्रकवि ने परशुराम का ही चित्र देश के सामने उपस्थित कर दिया। परशुराम की प्रतीक्षा' कवि की कोरी कल्पना नहीं, भारतीय जनता के हृदय की व्याकुल पुकार है और इस वाद का विरोध चाहे जितना भी किया जाय, उसका प्रभाव देश की विचारधारा पर पड़ता जा रहा है।साराशंतः

परशुराम के मिथक से कवि ने व्यावहारिक दृष्टिकोण रखा है जिसमें व्यहवारिक सत्य की पुकार है। परशुराम की प्रतीक्षा' कवि की कोरी कल्पना नहीं, भारतीय जनता के हृदय की व्याकुल पुकार है।